15

कैसी हों कहानियाँ?
(सीख का बोझ उठाए या जो मन को गुदगुदाए)

शारदा कुमारी*

प्राथमिक पाठ्यचर्या की ज़रूरतें पूरी करने के लिए पूर्णरूपेण परिपक्वता एवं अनुभवों के साथ बच्चों की तैयारी पूरी करने के लिए "बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा" के कार्यक्रमों को न केवल मानव विकास के अनिवार्य घटक, अपितु प्रारंभिक शिक्षा के सार्वजनीकरण और महिला विकास के कार्यक्रम के समर्थन के रूप में भी देखा गया है। इन कार्यक्रमों को क्रियान्वित करनेवाले अध्यापकों को 'प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा' नाम से दो वर्षीय पाठ्यक्रम में शामिल होना पड़ता है, जिसमें उन्हें बच्चों की ज़रूरतें समझने, उन्हें कहानी- कविता सुनाने और तरह-तरह की गतिविधियों में संलग्न करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। इस तरह का प्रशिक्षण देनेवाले एक संस्थान द्वारा बच्चों को कहानियाँ सुनाने के संदर्भ में क्या सिखाया जा रहा है, उसी की एक बानगी इस लेख में प्रस्तुत है।

"अच्छा बच्चो! इस कहानी से हमें क्या शिक्षा मिलती है?"

आठवीं प्रशिक्षणार्थी द्वारा भी जब यह कथन दोहराया गया तो मेरा अपना आपा खोना स्वाभाविक ही था। मैंने कहानी कहने के सत्रों पर कुछ देर के लिए रोक लगाई। पाठ प्रस्तुतीकरण से पहले की घबराहट झेल रही प्रशिक्षणार्थियों की श्वास मानों रुक-सी गई हो, ऐसा ही कुछ-कुछ उनकी अध्यापिका के चेहरे से भी लग रहा था। उन्हें शायद यह भान हुआ कि परीक्षक नाराज़ हो गई हैं। परीक्षक की नाराज़गी का असर कहीं 'अंकों' पर न पड़े, इसी आशंका से वे लड़कियाँ पीली पड़ी जा रही थीं। तनाव कहीं बढ़ न जाए, यह सोचकर मैंने हँसते हुए कहा, "परीक्षा तो चलती ही रहेगी। पहले आप सभी के साथ थोड़ी-सी बातचीत करना चाहती हूँ।"

आनन-फानन में सभी लड़कियाँ इकट्ठी हो गईं। उनकी अध्यापिका एवं संस्थान की प्राचार्या भी वहीं आ गईं। लड़कियाँ अभी भी सहज नहीं हुई थीं।

दरअसल ये लड़कियाँ, 'पूर्व बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा' (ईसीसीई) नामक दो वर्षीय सेवा पूर्व अध्यापक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम

* वरिष्ठ प्रवक्ता, म.शि.एवं प्रशिक्षण संस्थान, आर.के. पुरम्, नयी दिल्ली

के पहले वर्ष की प्रशिक्षणार्थी थीं और मैं। राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के परीक्षा प्रकोष्ठ द्वारा मनोनीत परीक्षक! मैं उनके कहानी कहने की कला का आकलन कर रही थी। 'कहानी कहना' (स्टोरी टैलिंग) इस पाठ्यक्रम के पहले वर्ष में 50 अंक की अनिवार्य गतिविधि है, इसमें 30 अंक बाह्य परीक्षक के हाथ में होते हैं। इन 30 अंकों की खातिर लड़कियों ने जी-तोड़ मेहनत की हुई थी। सबकी सब साड़ी पहनकर आई हुई थीं, मानो महिला अध्यापक की पहली शर्त और योग्यता साड़ी पहनना ही हो। इन लड़कियों की जो दूसरी तैयारी थी, वह वाकई काबिले तारीफ़ थी। सभी ने अपनी-अपनी कहानियों से संबंधित चरित्रों/पात्रों के आकर्षक कट आउट्स (गत्ते पर चित्र) बनाए थे, साथ ही कहानी की घटनाओं को क्रमवार तरीके से बतानेवाले बड़े ही लुभावने से फ्लैश कार्ड भी बना रखे थे। किसी-किसी के हाथ में कपड़ों और कागज़ से बनी हुई कठपुतलियाँ भी थीं। कहने की मंशा यह है कि पूर्व प्राथमिक और प्राथमिक शालाओं के बच्चों को रिझाने के लिए जो सामग्री चाहिए, वह इन लड़कियों के पास थी। बस जो एक महत्वपूर्ण चीज़ गायब थी, वह थी कहानी का चयन करने की समझ और उसका अंत प्रस्तुत करने का कौशल। अब जब कहानी का चयन ही बच्चों के अनुरूप न हो, तो भला सजीव-सी लगनेवाली कठपुतलियाँ बच्चों से भला क्या संवाद कर पाएँगी? रंगबिरंगे कटआउट्स और फ्लैश कार्ड भी भला क्या प्रभाव छोड़ पाएँगे? जब कहानी का विषय ही बच्चों के अनुरूप न हो, तो वे अपने अनुभवों को उस कहानी के साथ कैसे साँझा करेंगे और यदि कहानी उनके अनुभवों से न जुड़ पाई, तो किसी भी तरह से बच्चों को शाला में टिका नहीं पाएगी, साथ ही अन्य शैक्षिक प्रयोजनों जैसे- भाषायी कौशलों का विकास, जिज्ञासा उत्पन्न करना आदि में भी विफल हो जाएगी।

मैं पुनः ले चलती हूँ आप सबको 'पूर्व बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा' (इसे कहीं-कहीं एन.टी.टी. भी कहते हैं।) पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष की प्रशिक्षणार्थियों के बीच जो अब सहज होने की असफल-सी कोशिशें कर रही थीं। मैंने उनसे कहा कि व्यक्तिगत रूप से तो उनके कहानी प्रस्तुतीकरण को बाद में देखेंगे, अभी सामूहिक रूप से कुछ सवालों के उत्तर चाहिए। सबसे पहले जो सवाल उनसे पूछा, वह था- "बच्चों के लिए कहानी का चयन करते समय किन बातों को ध्यान में रखा जाए।" सीधे सपाट शब्दों में कहा जाए तो सवाल कहानी के चुनाव को लेकर था। सवाल सुनते ही कुछ प्रशिक्षणार्थियों ने तो तत्काल हाथ ऊपर किए उत्तर देने की अनुमति के लिए। कुछ ने झिझकते सहमते से हाथ ऊपर करके फिर नीचे कर लिए और कुछ इधर-उधर बगलें झाँकने लगीं। जो उत्तर सामने आए, वे इस प्रकार थे-

बच्चों के लिए कहानी का चयन करते समय यह ध्यान रखा जाए कि उसमें कोई न कोई संदेश निहित हो।

'संदेश' की व्याख्या उन्होंने मूल्यपरक शिक्षा के रूप में की। कहानियों के माध्यम से उनके अनुसार बच्चों को आज्ञाकारी होने, देश से प्रेम करने, अनुशासित जीवन जीने, सत्यनिष्ठ,

कर्त्तव्यपरायण एवं ईमानदार होने की शिक्षा मिलनी ज़रूरी है।

एक प्रशिक्षणार्थी ने उदाहरण देकर स्पष्ट किया कि जिस तरह महात्मा गांधी को 'सत्यवादी हरिश्चंद्र' नाटक देखकर सत्य बोलने की प्रेरणा मिली थी, लव-कुश को माता सीता ने ओज भरी कहानियाँ सुनाकर प्रेरित किया था, वीर शिवाजी के चरित्र पर भी अपनी माता द्वारा सुनाई गई कहानियों की छाप थी, उसी तरह हमें भी नर्सरी स्कूल के बच्चों को शिक्षाप्रद कहानियाँ ही सुनानी चाहिए।

शत-प्रतिशत लड़कियों का यही मत था कि कहानी का चुनाव इस आधार पर किया जाए कि उसमें बच्चों के लिए नीतिपरक संदेश हर स्थिति में विद्यमान हो और कहानी सुनाते समय उसे स्पष्ट रूप से उभारा जाए, ताकि बच्चे उस संदेश को ग्रहण कर सकें।

अपने सवाल के जवाब में कहानी के तकनीकी पक्ष को लेकर भी बातें सामने आईं, जैसे-

- कहानी बहुत लंबी न हो,
- कहानी में वाक्य छोटे-छोटे हों।
- भाषा सधी हुई होनी चाहिए। (सधी हुई भाषा से उनका तात्पर्य मानक भाषा से था।)
- जानवरों के पात्रों वाली कहानियाँ हों, क्योंकि बच्चों को जानवर बहुत भाते हैं।
- कहानी सुनाते समय बीच-बीच में बच्चों से प्रश्न ज़रूर पूछे जाएँ, जिससे पता चलता रहे कि बच्चे कुछ सुन भी रहे हैं या नहीं।
- कहानी सुनाते समय आवश्यकतानुसार अभिनय भी किया जाए, जिससे बच्चों की रुचि बराबर बनी रहे।

अपने सवाल के उत्तर में इस तरह की प्रतिक्रियाएँ सुनकर क्रोध में आकर बहुत कुछ कहने का मन तो कर रहा था, परंतु संयत होने का अभिनय करते हुए पूछा-

"आप अपने बचपन को याद करें, या फिर उन्हीं बच्चों की बात करें, जिनके लिए आप प्रशिक्षण ले रही हैं और तरह-तरह की बातें सीख रही हैं। उन्हें कैसी कहानियाँ पसंद हैं?"

सवाल अटपटा तो नहीं था, परंतु उन लड़कियों की भाव-भंगिमाएँ देखकर तो यही लगा कि यह सवाल उनकी वार्षिक परीक्षा में पूछे जाने लायक नहीं था। जो भी बात रही हो, एक ने झिझकते हुए कहा, "जी, बच्चे तो बस ऐसी कहानियाँ ही सुनना चाहते हैं, जिसमें मज़ा ही मज़ा हो।"

दूसरी ने भी हिम्मत की, "उन्हें तो बस ऐसी कहानियाँ चाहिए, जिनमें अगड़म-बगड़म-सी बातें हो, जिन पर वे हँसते ही रहें।"

तीसरी लड़की ने साहस का एक कदम और आगे बढ़ाया। बहुत हौले से बोली - "उपदेश की बातें न तो उनकी समझ में आती हैं और न ही वे सुनना चाहते हैं।"

"फिर तुम्हारी कहानियाँ उनके स्वभाव के विपरीत क्यों हैं? जब उन्हें उपदेश सुनना पसंद ही नहीं है और सबसे बड़ी बात यह कि उन्हें समझ में भी नहीं आते, तो तुम्हारी कहानियाँ उपदेश और शिक्षा के भार से बोझिल क्यों हैं?"

अब की बार पूछे गए सवाल से वहाँ सन्नाटा छा गया। न कोई हाथ उठा, न सिर हिले, न ही कोई फुसफुसाया। वहाँ पसरे हुए

इस सन्नाटे को बेधने की कोशिश किसी ने नहीं की, क्योंकि सब मान चुके थे कि वे कहानी कहने की कला को बच्चों के स्वभाव के विपरीत दिशा की ओर ले जा रहे हैं।

अब तक मैं आठ प्रस्तुतियाँ (कहानी) देख चुकी थी। आठों कहानियों के शीर्षक से आप अनुमान लगा सकेंगे कि उन कहानियों का कलेवर क्या होगा और यह निर्णय भी ले सकेंगे कि इस तरह की कहानियाँ नर्सरी, पहली तथा दूसरी कक्षा के बच्चों के लिए उपयुक्त थीं अथवा नहीं। उन आठों कहानियों के शीर्षक इस प्रकार हैं–

- **महादानी कर्ण**– महाभारत के महत्वपूर्ण पात्र कर्ण की दानवीरता के बारे में कहानी थी।
- **चार मित्र**– चार मित्र जो वेदों के ज्ञाता थे। अपने ज्ञान के आधार पर उन्होंने ऐसे कौशल हासिल कर लिए थे, जो अपने-आप में विलक्षण थे। जैसे– मरे हुए जीव के कंकाल को शरीर प्रदान करना, उसमें जान फूँकना, परंतु जिनमें समझ के कौशल का अभाव था।
- **दानी पेड़**– वह पेड़ जो मनुष्य को फल-फूल छाँव सब कुछ देता रहा और जब ठूँठ रह गया, तब भी मनुष्य के बैठने का सहारा बना।

4. **मातृ-पितृ भक्त श्रवण कुमार**– अपने माता-पिता को काँवड़ पर तीर्थयात्रा करवानेवाला युवक।
5. **रंगा सियार**– नील के टब में कूदने के बाद नीला हुआ सियार, जो स्वयं को अपने और साथियों से उत्कृष्ट मानने लगा था, परंतु बाद में हुआ-हुआ, की आवाज़ से पहचाना गया और साथियों द्वारा पिटा।
6. **हाथी और दर्ज़ी का बेटा**– एक ऐसे हाथी की कहानी, जो रोज़ एक दर्ज़ी की दुकान के सामने से गुज़रता था। दर्ज़ी उसे कुछ न कुछ खाने के लिए देता था। एक दिन दर्ज़ी की जगह उसका बेटा दुकान पर बैठा था। वह हाथी की सूँड में सुई चुभो देता है। हाथी ने उस समय कुछ भी नहीं कहा। तालाब से लौटते समय वह सूँड में कीचड़ भरकर लाता है और दर्ज़ी की दुकान पर उँड़ेल देता है।
7. **ध्रुव की प्रतिज्ञा**– नन्हे बालक ध्रुव की कहानी, जो यज्ञ में बार-बार पिता से पूछता है कि वे उसे किसको दान में देंगे। बार-बार पूछने से पिता क्रोध में आ जाते हैं और कहते हैं कि वे उसे यम को दान में देंगे। ध्रुव उनकी खोज में निकल पड़ता है। वह अपने अटल और दृढ़ निश्चय के बारे में विख्यात हुआ।
8. **प्यासा कौआ**– पानी की तलाश में भटकते हुए कौए को जंगल में कहीं आधा भरा हुआ घड़ा मिलता है। कौआ उसमें कंकड़ डालता है। पानी ऊपर आ जाता है और कौआ इस प्रकार अपनी प्यास बुझाता है।

नर्सरी कक्षा के बच्चों को सुनाई जानेवाली आठों कहानियाँ आपके सामने हैं। आपके विचार में कहानियों के चयन में कहाँ चूक हुई है? इस सवाल के आधार पर यह धारणा तो कदापि न बनाएँ कि उपर्युक्त कहानियाँ सुनाने लायक नहीं

हैं। कहानियाँ तो अपने-आप में बहुत खूबसूरत हैं, गलती केवल दो तरह के निर्णय लेने के संबंध में हुई है-

1. **जिन बच्चों को कहानी सुनाई जानी है, उनकी उम्र क्या है?** उम्र के आधार पर हमें बच्चों के सुनने, समझने, सोचने, कहानी की घटनाओं से अपने अनुभवों को साँझा करने और उससे जुड़ने की क्षमताओं का अनुमान होता है।

2. **जिन बच्चों को कहानी सुनाई जानी है, उन्हें कहानी सुनाने के पीछे कौन-से उद्देश्य निहित हैं?** यदि हम बच्चों की निगाह से देखें, तो कहानी सुनाने का उद्देश्य बच्चे का नैतिक विकास करना नहीं है। बच्चों के लिए एक अच्छी कहानी सुनने का नैतिकता या नैतिक शिक्षा से कोई संबंध नहीं है या कम-से-कम कोई सीधा और गहरा संबंध तो नहीं है। कहानी सुनाने के उद्देश्य काफ़ी अलग हैं-

- 'कहानियाँ,' भाषायी कौशलों का विकास करती हैं। नर्सरी कक्षा के स्तर पर विशेषकर अच्छी तरह से सुनने का कौशल विकसित करने एवं उसमें संवर्द्धन करने का उद्देश्य पूरा करती हैं। हमारे देश में दादा-दादी/नाना-नानी द्वारा बच्चों को कहानी सुनाने की बहुत पुरानी, मजबूत और मौलिक परंपरा रही है। इसका उद्देश्य परिवार के बुज़ुर्गों द्वारा 'अपना टाइम पास' करना नहीं था, बल्कि बच्चों में 'सुनने' की आदत का विकास करके उनमें सहिष्णुता पैदा करना था। कोई आश्चर्य नहीं कि आज की पीढ़ी 'सुनने' का माद्दा खो चुकी है। दूसरे की बात सुने बिना ही अपनी प्रतिक्रिया देना, आधी बात सुनकर ही निर्णय ले लेना या निर्णय तक पहुँचने की जल्दबाजी करना और बिना सुने ही स्थिति या व्यक्ति विशेष के प्रति धारणा बना लेना, यह सब कहानियाँ न सुनने या फिर ऐसी कहानियाँ सुनने का परिणाम हो सकता है, जिनकी घटनाओं में हम कल्पनाओं की डुबकियाँ नहीं लगा पाते। बुज़ुर्गों के स्थान पर कहानी सुनाने की जो संस्थायी शुरुआत हुई है (विद्यालयों में अध्यापक द्वारा, रेडियो पर, ऑडियो कैसेट द्वारा आदि) उसका स्वागत किया जाना चाहिए, परंतु यदि कहानी के चयन में बच्चों की उम्र, समझ या उद्देश्य को नज़रअंदाज किया जाएगा, तो विद्यालयों को कहानी सुनाने का मोह त्याग देना चाहिए।
- कहानियाँ अनुमान लगाने, कल्पनाशीलता का पोषण करने व रचनात्मक अभिवृत्तियों को विकसित करने का मौका देती हैं- बच्चों को भाने वाली कहानियों की घटनाएँ बच्चों को बाध्य कर देती हैं कि वे तरह-तरह की अटकले लगाएँ कि अब क्या होनेवाला है या उसके पसंदीदा पात्र ने ऐसा क्यों किया, उसे ऐसा करना चाहिए था या नहीं। वे कहानी के अंत के बारे में भी तरह-तरह की संभावनाएँ जुटाते चलते हैं कि होना तो ऐसा चाहिए था परंतु नहीं हुआ तो क्यों नहीं हुआ। कहानी सुनाने से इन अभीष्ट परिणामों की प्राप्ति तभी संभव है, जब कहानी उनके मर्म को छू जाए। इस संदर्भ में कहानी का चयन बहुत महत्वूपर्ण हो जाता है।

- कहानी संदर्भ और अनुभवों को विस्तार देती है- रोज़मर्रा की ज़िंदगी में बच्चे तरह-तरह के लोगों के संपर्क में आते हैं और भिन्न-भिन्न प्रकार की गतिविधियों में संलग्न रहते हैं। इस तरह से वे अनुभव हासिल करते हैं। उनके अनुभवों के खजाने को समृद्ध करती हैं कहानियाँ! कहानियों में रची-बसी घटनाएँ और उसके पात्र उनके अनुभवों से जुड़ते जाते हैं, उनके पूर्व अनुभवों से सवाल भी करते हैं, तो कभी पहले से बसे सवालों के उत्तर भी देते हैं। आपसी खेलकूद से जो वे ज्ञान हासिल करते हैं, कहानियाँ उस ज्ञान को पुख्ता करने और उस पर सवाल उठाने का काम भी करती हैं। बच्चों ने जो अनुभव अभी तक हासिल नहीं किए हैं, कहानियाँ उन अजूबों एवं नए रूपकों की तस्वीर बच्चों के सामने खीच देती हैं। इस तरह बच्चे अपने अनुभवों की दुनिया का विस्तार कर लेते हैं।
- कहानियाँ नए शब्दों से पहचान तथा पहले से सीखे हुए शब्दों के अर्थों को विस्तार देती हैं- इसमें कोई संदेह नहीं हैं कि कहानी भाषायी कौशलों के विकास और विस्तार का अचूक साधन है। सुनने-सुनाने, सवाल करने, अटकलें लगाने, उत्तर देने, हाव-भाव के साथ अपनी बात कहने जैसे कौशलों के विकास के साथ-साथ नए-नए शब्द सीखने और गढ़ने के भी मौके देती हैं कहानियाँ। पहले से सीखे हुए शब्द के प्रति बनी समझ को पुख्ता करती हैं और उन्हें भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में कैसे प्रयुक्त करना है, इसकी समझ भी पैदा करती हैं। शब्द ही वे माध्यम है, जिनके ज़रिए हम अपने अनुभव दूसरों से साँझा करते हैं। अलग-अलग दो व्यक्तियों के साथ एक-सा अनुभव बाँटने के लिए ज़रूरी नहीं है कि हम एक ही से शब्दों का सहारा लें। व्यक्ति विशेष की प्रकृति को देखते हुए अलग-अलग शब्द भी चुनने होंगे और इस तरह की समझ कहानियाँ बखूबी हमें देती हैं।

अगर बच्चों को विशेषकर नर्सरी शालाओं में अध्यापन कर रहे बच्चों को कहानी सुनाने के उद्देश्य यही हैं तो प्रशिक्षणार्थियों ने (जिनकी बात शुरू में की गई है) जिन कहानियों का चयन किया, उनका कोई औचित्य नहीं बनता है। मेरी समझ में तो इस तरह की कहानियाँ बच्चों में तरह-तरह के भ्रम ही पैदा करेंगी।

कुछ समय पहले अमरीकी मनोविश्लेषक ब्रूनो बैटेलहाइम ने अपनी एक पुस्तक "*मोह के उपयोग*" (यूज़ेज ऑफ इन्वेटमेट) में लिखा था कि छोटे बच्चों के भावनात्मक विकास की कई गहरी ज़रूरतें नियमित रूप से परीकथाएँ सुनकर पूरी होती हैं। उत्तरी अमरीका में इस पुस्तक की व्यापक चर्चा हुई और कहानी सुनाने की ज़रूरत को समझा गया और इस कला को पुनर्जीवित करने के प्रयासों में लगे अभिभावकों, अध्यापकों एवं शिक्षाविदों को मदद मिली।

लोककथाओं और परीकथाओं की संरचना छोटे बच्चों की सोचने की शैली से मेल खाती है। शायद यही वजह है कि छोटे बच्चे इन कहानियों के प्रति बहुत अधिक आकर्षित होते

हैं। इन परीकथाओं में कई तरह के उतार-चढ़ाव, दु:ख एवं खुशी के मौके आते हैं। पात्रों पर कई तरह की विपत्तियाँ आती हैं। उनके कल्पनाशील समाधान भी रचे-बसे होते हैं इन कहानियों में। बच्चों की विस्फारित होती आँखें, खुले रह जाते होंठ, भिंचती हुई मुट्ठियाँ तथा माथे पर पड़ती लकीरें ज़ाहिर करते हैं कि बच्चे कहानी में खो चुके हैं। बच्चों की मानसिक माँगों को एक बड़ी सीमा तक पूरा करते हैं कहानियों के ये विषय।

परीकथाओं और लोककथाओं की अपनी एक बुनियादी लय होती है। शब्द और वाक्य रचना की अपनी एक शैली होती है। मनुष्य के सामाजिक जीवन के इर्द-गिर्द रची-बसी घटनाएँ इनके विषय होती हैं, जो बच्चों में ये कौतूहल और जिज्ञासा पैदा करने के साथ-साथ सामाजिकता के कई पाठ पढ़ा जाती हैं।

नीतिपरक विषय अमूर्त होते हैं। सत्यनिष्ठा, दानवीरता, अहिंसा एवं परोपकार ये सब ऐसे विषय हैं, जो इस स्तर पर जिज्ञासा या कौतुहल तो क्या ही पैदा करेंगे, बल्कि ऊहापोह की स्थिति में डाल देंगे। इस बात से कदापि यह निष्कर्ष न निकाला जाए कि मूल्य आधारित कहानियाँ सुनाई ही न जाएँ। कहना तो यह है कि पहले निजी जीवन में इन सब गुणों से उसका वास्ता पड़ जाए, फिर शायद वे स्वत: ही इस तरह की कहानियों की माँग करने लगेंगे। बहुत-से बाल साहित्यकार लोककथाओं और परीकथाओं की समृद्ध ताकत को भूलकर नए तरीके का बालसाहित्य रच रहे हैं, जो उपदेशमूलक कहानियों के बोझ तले दबा होता है। उसकी बोझिलता बच्चों को क्या और कैसे स्फूर्ति दे पाएगी? लोग कहते हैं कि आज के बच्चों को परीकथाएँ व लोककथाएँ नहीं चाहिए। वे इनके नुकसान गिनाकर विज्ञानपरक एवं उपदेशमूलक यथार्थ से जुड़ी कहानियाँ सुनाने की वकालत करते हैं। वे तर्क देते हैं कि फंतासी की दुनिया से बच्चों को बचाना चाहिए। बच्चों की दुनिया ने उनके तर्कों को बेबुनियाद सिद्ध किया है। रूस के महान शिक्षाविद् और बालसाहित्यकार कोर्नेइ चुकोव्यकी ने इस उम्र के बच्चों के लिए लोककथाओं व परीकथाओं की पुरज़ोर वकालत की है। उनके अनुसार इन कहानियों का विरोध करनेवाले निरे पोंगा क्रांतिकारी हैं, जो बालमन की सही समझ नहीं रखते हैं और कच्ची उम्र में ही बच्चों पर तरह-तरह की सीख का बोझ लाद देते हैं। यह बोझ जन्म देता है, उकताहट को। उकताहट बनती है कारण विद्यालय से पलायन करने का, सीखने में ऊब का और शिथिलता का। गिजुभाई बधेका ने सलाह दी थी कि बच्चों से सरोकार रखनेवाले हर व्यक्ति को, खासकर अध्यापकों को लोककथाएँ और परीकथाएँ कंठस्थ होनी चाहिएँ, जिनकी मदद से वे बच्चों को चमत्कृत कर सकें। उनके अनुसार इन कथाओं की भाषा की स्वाभाविक लय और पात्रों का स्वाभाविक व्यक्तित्व अपनी सहजता से बच्चों को अपना बना लेता है और उन्हीं के सवालों, घटनाओं के ज़रिए नीति से जुड़े बहुत से संदेश बड़े ही सहज भाव से बच्चों के मानस पर अंकित हो जाते हैं। उसके लिए असहज से लगने वाले पात्र, घटनाएँ और संदेश बुनने की ज़रूरत नहीं होती।

स्वयं प्रशिक्षणार्थियों ने स्वीकार किया था कि बच्चों को तो ऐसी कहानियाँ भाती हैं, जिनमें मज़ा ही मज़ा हो। फिर क्या कारण है कि ज़बरन उनको भारी-भरकम संदेशवाहक कहानियाँ सुनाने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है।

पूर्व प्राथमिक एवं प्राथमिक शालाओं के शिक्षकों एवं इस स्तर के अध्यापकों को प्रशिक्षण देनेवाले प्रशिक्षकों के लिए अनुशंसा है कि वे बच्चों को कहानी सुनाने के महत्त्व को अपने नज़रिये से न देखकर बच्चों के नज़रिये से देखें। वे प्रशिक्षणार्थियों को सुझाव दें कि कहानी को लेकर देशी-विदेशी शिक्षाविदों ने जो लिखा है, उसे पढ़ें और समझने का प्रयास करें।

गिजुभाई बधेका, सिल्विया एश्टन वार्नर, प्रो. कृष्ण कुमार आदि ने बच्चों को सुनाने लायक कहानियों की विशेषताएँ बताई हैं और एक विस्तृत सूची भी दी है। हमें उन पर विचार करना चाहिए। हमें इस बात पर भी गौर करना चाहिए कि सीखों को ध्यान में रखकर उसके इर्द-गिर्द कहानी बुनकर बच्चों को सुनाना उनके प्रति अन्याय होगा। वे बच्चे जिन्होंने अभी छलकपट की दुनिया में प्रवेश किया ही नहीं है, उन्हें ईमानदारी का पाठ पढ़ाना कहाँ तक तर्कसंगत है। वे बच्चे जिन्हें झूठ बोलने की ज़रूरत ही नहीं पड़ी या फिर जिन्होंने झूठ जाना- देखा ही नहीं हैं, उन्हें 'सत्य' बनने-बोलने की शिक्षा-दीक्षा देने का क्या औचित्य है? वे बच्चे जिनके लिए पूरी दुनिया उनका अपना घर और खेलने-कूदने के साथी हैं, उन्हें देश जैसी अमूर्त अवधारणा के प्रति प्रेम की सीख देना कितना प्रासंगिक है? वे बच्चे जिनकी संपत्ति केवल खेलकूद के कुछ पलों तक ही सिमटी है, उन्हें दानवीर बनने के लिए ललकारना कितना न्यायसंगत है? बच्चों से सरोकार रखनेवाले हर व्यक्ति को इन प्रश्नों के उत्तरों की खोज करनी चाहिए और खोजे गए उत्तरों के आधार पर ऐसी कहानियाँ कंठस्थ करनी चाहिए, जो बच्चों के मन को गुदगुदा सकें, उन्हें कल्पनाओं के घोड़े पर सवार करके अनजानी रोमांचकारी दुनिया की सैर करा सकें, उनके मानस में घुमड़ रहे छोटे-छोटे सवालों से संवाद करा सकें। उनके मन में अंगड़ाई ले रही उम्मीदों को सजा-सँवार सकें और तरह-तरह के सपने बुनने और उन सपनों में विचरने के लिए करिश्माई-रहस्यमयी- जादुई धरा प्रदान कर सकें।

आशा है, पूर्व प्राथमिक शाला के बच्चों को कहानी सुनाते समय शिक्षक अपने बचपन में सुनी गई कहानियों को जो अभी भी उनकी स्मृति में कहीं टँकी हुई हैं, याद करने का मोह ज़रूर करेंगे और वैसी कहानियाँ सुनाएँगे जिनमें उन्हें बचपन में भरपूर आनंद मिला था।

❑❑❑